अतः … आपको बार-बार नमस्कार युक्त वचन कहते हैं।

कठोपनिषद्

यह कठोपनिषद् कृष्ण यजुर्वेद की कठ शाखा का एक भाग है। इसमें कुल दो अध्याय और प्रत्येक अध्याय में 3-3 वल्लियां हैं। प्रथम अध्याय में नचिकेता एवं यम के उपाख्यान द्वारा आत्मा और ब्रह्म की व्याख्या की गई है। प्रारम्भ में उद्दालक ऋषि द्वारा गोदान का व्रत लिया गया। जब कुछ वृद्ध गायों को दान कर दिया तो नचिकेता द्वारा क्रोध में पूछे जाने पर कि आप मुझे किसे दान में देंगे। उद्दालक ने आवेश में यही कहा कि मैं तुझे यमराज को दूंगा। नचिकेता पिता की आज्ञा से यम के पास पहुंचता है। यमराज उससे तीन वर मांगने को कहता है। नचिकेता यम से ब्रह्म विद्या से सम्बन्धित प्रश्न पूछता है। कठोपनिषद् का वृत्त इतना ही है। प्रथम अध्याय ही मूल उपनिषद् है। दूसरा अध्याय बाद में जोड़ा गया है क्योंकि इसमें योग सम्बन्धी विकसित विचारों एवं भौतिक पदार्थों की असत्यता सम्बन्धी विचारों के कारण परवर्ती सन्निवेश जान पड़ता है।

प्रथम अध्याय की प्रथम बल्ली में नचिकेता को तीन वर प्राप्त होते हैं। द्वितीय बल्ली में यमराज ने नचिकेता को तत्व ज्ञान का वास्तविक अधिकारी जानकर विद्या और अविद्या को प्राप्त कराने वाले श्रेयस् और प्रेयस् दो प्रकार के मार्गों का उपदेश दिया है। तृतीय बल्ली में जीवात्मा और परमात्मा रूप में आत्मा के दो भेद बतलाकर दोनों को छाया और धूप के समान बतलाया है। ये दोनों ही छाया और धूप के समान परस्पर सम्बद्ध हैं।

द्वितीय अध्याय की प्रथम बल्ली में यम नचिकेता से कहता है कि इन्द्रियों की प्रवृत्ति बहिर्मुखी होती है अतः वे अन्तरात्मा को नहीं देखतीं। धीर पुरुष ही अमृतत्व की इच्छा करता हुआ बहिर्मुखी इन्द्रियों को अन्तर्मुखी करके अन्तरात्मा का साक्षात्कार कर अमरत्व को प्राप्त करता है। द्वितीय बल्ली में यम नचिकेता से कहता है कि उस विशुद्ध ज्ञानरूप अजन्मा आत्मा का ग्यारह दरवाजों वाला नगर है। इस नगर के स्वामी आत्मा का ध्यान करके मनुष्य जन्म-मरण के बन्धन से छूट जाता है। यह आत्मा सर्वव्यापी एवं सर्वगामी हैं। तृतीय बल्ली में यमराज नचिकेता से कहता है कि यह संसार रूपी वृक्ष सनातन एवं अनादि है। इस वृक्ष की जड़ें ऊपर की ओर और शाखाएं नीचे की ओर फैली हुई हैं। इस वृक्ष का मूल शुद्ध एवं अमृत ब्रह्म है और शाखाएं देव, पितर, आदि। यम कहते हैं हृदय की कुल एक सौ नाड़ियां हैं, उनमें एक सुषुम्ना नाड़ी ब्रह्मरन्ध्र की ओर गई है जिसके द्वारा ऊपर की ओर जाने वाला मनुष्य अमरत्व को प्राप्त करता है और अन्य नाड़ियां चारों ओर गमन करने वाली होती हैं। यह आत्मा सब लोगों के हृदय में प्रविष्ट है। उसे शरीर से अलग समझने वाला मनुष्य अमर पद को प्राप्त करता है। यही आत्मा अमृत एवं शुद्ध स्वरूप है।

कठोपनिषद् में अनेक ऐसे विषय हैं जिनका ज्ञान प्राप्त करना आवश्यक है। यही विषय उसकी सम्पूर्ण विषयवस्तु को विवेचित करते हैं। मुख्य रूप से इस उपनिषद् का प्रतिपाद्य विषय आत्म विद्या है। ऋग्वेद में आत्मन् शब्द का प्रयोग वायु शब्द के पर्याय के रूप में किया गया है। ब्राह्मण ग्रन्थों में इस शब्द का प्रयोग जीवात्मा के अर्थ में होता है। इसके साथ-साथ यह उपनिषद् आचार एवं व्यवहार दर्शन, कर्तव्य मार्ग, नैतिक मार्ग, पुनर्जन्म सिद्धान्त, परा एवं अपरा विद्या आदि विषयों का प्रतिपादन करता है। सभी दार्शनिक अपने-अपने मतों की पुष्टि के लिए उपनिषदों का ही आश्रय लेते हैं। इसमें वर्णित विद्या का रहस्य समझने के लिए साधना की आवश्यकता है। यहां कठोपनिषद् के मूल तत्वों को विवेचित किया जा रहा है।

आत्मतत्व—आत्मन् शब्द अन् प्राणने धातु से निष्पन्न है जिसका अर्थ है—'प्राण'। ऋग्वेद में इसका अर्थ वायु बताया गया है। आचार्य शंकर आत्मन् शब्द की व्युत्पत्ति का निर्देश करते हुए बताते हैं कि जो सर्वत्र व्याप्त है, सबको अपने में ग्रहण कर लेता है, विषयों का उपभोग करता है और इसकी सत्ता निरन्तर रहती है।

कठोपनिषद् में आत्मा के स्वरूप का विवेचन करते हुए कहा गया है कि यह आत्मा न जन्म लेता है न मरता है, न स्वयं किसी से उत्पन्न हुआ है और न इससे कोई उत्पन्न हुआ है। इस शरीर के नष्ट हो जाने पर भी वह नष्ट नहीं होता। यह आत्मा न मरता है और न किसी को मारता है जो इसे मरा हुआ या मारने वाला समझता है वह आत्मा को नहीं जानता। जिस प्रकार सम्पूर्ण लोकों में प्रविष्ट एक ही अग्नि अनेक रूप में प्रतिभासित होती है उसी प्रकार सम्पूर्ण भूतों में रहने वाला एक ही अन्तरात्मा अनेक रूप में प्रतिभासित होता है।

अग्निर्यथैको भुवनं प्रविष्टो रूपं रूपं प्रतिरूपो बभूव।
एकस्तथा सर्वभूतान्तरात्मा रूपं रूपं प्रतिरूपो बहिश्च॥

ब्रह्म—उपनिषदों में परमतत्व परमात्मा को ब्रह्म कहा गया है। कठोपनिषद् में ओउम् को ब्रह्म का वाच्य बताया है। ओउम् 'अ, उ, म्' इन तीन वर्णों से बना है। ओउम् की ये तीनों मात्राएं ब्रह्म के तीन पाद हैं और ओउम् का निराकार मात्रा रहित रूप ही आत्मा का चतुर्थ पाद है।

कठोपनिषद् में बताया गया है कि इन्द्रियों में श्रेष्ठ मन है, मन से श्रेष्ठ बुद्धि है, बुद्धि से श्रेष्ठ महान आत्मा है और महान आत्मा से श्रेष्ठ अव्यक्त और अव्यक्त से श्रेष्ठ पुरुष है जो सर्वव्यापक एवं अलिङ्ग है। ब्रह्म शब्दरहित, स्पर्शरहित, रूपरहित, अविनाशी, स्वादरहित, नित्य गन्धरहित, अनादि, अनन्त और महत्तत्व से परे स्थिर है। उस ब्रह्म को जानकर मनुष्य मृत्यु के मुख से मुक्त हो जाता है।

इस प्रकार यह ब्रह्म विश्व में व्याप्त, आदि और अन्त से रहित है। यह सोपाधि निरुपाधि भेद से दो प्रकार का होता है।

ब्रह्म और माया—कठोपनिषद् के अनुसार एकमात्र परमतत्व ब्रह्म है। वही एकमात्र परमसत् है। माया ब्रह्म की शक्ति, अविद्या, अज्ञान और प्रपंचात्मक जगत् की जननी है। यह त्रिगुणात्मिका और ईश्वर की शक्ति है। अविद्या या माया से आच्छन्न होने के कारण यह गूढ़ आत्मा प्रकाशित नहीं होती। इन्द्रियों से परे शब्दादि विषय हैं, विषयों से परे मन, मन से परे बुद्धि और बुद्धि से परे महान आत्मा है और महत् से परे अव्यक्त माया है। इस माया तत्व से परे पुरुष है, उससे परे कोई वस्तु नहीं। वही सर्वोपरि परमसत्ता है।

मोक्ष—कठोपनिषद् में बताया गया है—जब हृदय में रहने वाली सारी कामनाएं नष्ट हो जाती हैं, हृदय की सारी गांठें खुल जाती हैं, अविद्या से उत्पन्न अज्ञान नष्ट हो जाता है, माया के सारे बन्धन टूट जाते हैं तब मनुष्य परमात्मा का साक्षात्कार कर मोक्ष को प्राप्त होता है।

उपनिषदों में ज्ञान ही मोक्ष प्राप्ति का साधन है। ज्ञान से अज्ञान का नाश होता है और ज्ञान प्राप्त होने पर मोक्ष मिलता है। परमतत्व परब्रह्म ही सर्वोपरि है, उस परमतत्व को जानकर ही जीवात्मा प्रकृति के बन्धनों से मुक्त होकर अमर पद को प्राप्त करता है।

पुनर्जन्म और कर्मसिद्धान्त—कठोपनिषद् में एक आख्यान द्वारा पुनर्जन्म के सिद्धान्त का प्रतिपादन किया गया है। नचिकेता नामक एक बालक सशरीर यमलोक जाता है और यमराज उससे तीन वर मांगने को कहता है। प्रथम दो वर मांगने के बाद तृतीय वर के रूप में यम से पूछता है कि 'मृत्यु के बाद मनुष्य का क्या होता है?' यमराज कहते हैं कि जीवन-मरण विकास की विभिन्न अवस्थाएं हैं। जीव और ब्रह्म के ऐक्य की अनुभूति कराने वाला तत्वज्ञान मनुष्य को मृत्यु से अतीत बनाकर अमृतत्व को प्राप्त कराता है। वस्तुतः चैतन्य रूप ब्रह्म एक है जो इस आत्मा को अनेक रूपों में देखता है, वही जन्म-मरण के चक्र में पड़ता है। वह आत्मा हमेशा विद्यमान रहता है, मृत्यु के बाद भी उसका अस्तित्व रहता है। वह एक शरीर को छोड़कर दूसरे शरीर में प्रविष्ट

होता है, यही उसका जन्म लेना है। पूर्व जन्मों के कर्मों के अनुसार मनुष्य नाना योनियों में भटकता रहता है किन्तु जो आत्मतत्व को जान लेते हैं वे मृत्यु को पारकर अमर पद को प्राप्त करते हैं और जो पापात्मा बुरे कर्म करते हैं वे इस संसार में बार-बार जन्म-मरण के चक्र में पड़ते हैं।

श्रेयस् और प्रेयस्—कठोपनिषद् में श्रेय और प्रेय दोनों मार्गों का उल्लेख है। इनमें श्रेय मार्ग ज्ञान, विद्या और मोक्ष का मार्ग है तथा प्रेय अज्ञान और अविद्या का मार्ग है। ये दोनों ही मार्ग पुरुष को नाना प्रकार के विषयों में बांधते हैं और अपनी-अपनी ओर आकर्षित करते हैं। इन दोनों के प्रयोजन भी भिन्न-भिन्न हैं। श्रेयमार्ग आत्मज्ञान का मार्ग है इसका फल भिन्न है। इस आत्मज्ञान के मार्ग से अमृतत्व की प्राप्ति होती है, आत्मशक्ति का विकास होता है। इस मार्ग को अपनाने वाला सदा बन्धन से छूटकर अनन्त असीम सुख को प्राप्त करता है यह मार्ग श्रेय, सुख एवं शान्ति का मार्ग है।

प्रेय मार्ग अविद्या, अज्ञान अनात्मज्ञान का मार्ग है। इस मार्ग से ऐहिक सुख-समृद्धि एवं ऐश्वर्य की प्राप्ति तथा जागतिक सुख भोग की सामग्री की प्राप्ति होती है। इस प्रकार बुद्धिमान उनमें से श्रेय मार्ग को अपनाकर सुख शान्ति का अनुभव करता है, धैर्य का परित्याग नहीं करता, न्याय पथ से विचलित नहीं होता जबकि अज्ञानी प्रेय मार्ग को अपनाते हैं इससे ऐहिक सुख की प्राप्ति होती है वे अज्ञान के गाढ़ अन्धकार में पड़ते हैं और बार-बार जन्म लेकर दुःख का भोग करते हैं।